ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 119-123**

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.- IV, Issues-38, YEAR- Oct.-Dec.2025

राकेश रंजन की कविताओं में लोकमर्म की तलाश

कुमारी कंचन सिंह, 2. डॉ0 सुशांत कुमार

शोध अध्येत्री, 2. सहायक प्राध्यापक, विश्वविद्यालय हिंदी विभाग, बाबासाहेब भीमराव अम्बेदकर बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर (बिहार) भारत

Received-06.10.2025, Revised-13.10.2025, Accepted-19.10.2025 **E-mail : kanchan1997c2@gmail.com**

सारांशः राकेश रंजन ने अपनी कविताओं में लोकमर्म की अभिव्यक्ति बहुत सशक्त और मार्मिक ढंग से अभिव्यक्त किया है।इनके यहाँलोगों की पीड़ा, संघर्ष, विश्वास, आशा,शोषण, बेरोज़गारी, पलायन, विघटित होते सांस्कृतिक मूल्यों पर चिंता, प्रेम और मानवीय संवेदनाएँ सहज रूप से प्रकट होती हैं। वे लोकजीवन की दुख–सुख की कथा, लोकजीवन की जिजीविषा, सामाजिक सरोकारों और सामुदायिक मूल्यों को अपनी कविताओं में जीवंत करते हैं तथासांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करते हैं।इनकी कविताओं को गाँव–समाज की खुशियाँ, त्योहार, कृषि, श्रम और सामाजिक रिश्तों की भावना लोकधर्मी बनाती है।वे आधुनिकता की चकाचौंध में दबते ग्रामीण जीवन के वास्तविक स्वर को अपनी कविताओं के माध्यम से मुखर करते हैं। इनकी भाषा लोकधर्मी है जिसे पाठकगण आसानी से आत्मसात कर लेते हैंद्य इस प्रकार, राकेश रंजन की कवितायें लोकमर्म को संरक्षित करते हुएसमकालीन संदर्भों में पुनः प्रासंगिक भी बनाती हैं।

कुंजीभूत शब्द– इक्कीसवीं सदी, लोक जीवन, लोक संस्कृति, नवीनतम पीढ़ी, संस्कारगत रीति–रिवाज,मजदूर, किसान,रूढिया।

प्रस्तावना– इक्कीसवीं सदी के आरंभ के साथ नवीनतम पीढ़ी के जिन कवियों ने हिंदी काव्य के क्षितिज पर अपनी गंभीर एवं महत्त्वपूर्ण उपास्थिति दर्ज की है,उनमें राकेश रंजन अपनी लोक–संपृक्ति, छंद–चेतना एवं युग–बोध के कारण अलग से रेखांकित किये जाते हैं। इनके तीन कविता संग्रह 'अभी–अभी जनमा है कवि', 'चाँद में अटकी पतंग' एवं 'दिव्य कैदखाने में', एक उपन्यास 'मल्लू मठफोड़वा' तथा एक आलोचना पुस्तक 'रचना और रचनाकार' प्रकाशित हैं। वे 2006 के विद्यापति पुरस्कार तथा 2009 के हेमंत स्मृति कविता सम्मान से सम्मानित हो चुके हैं। उनकी कविताओं पर हिन्दी के मूर्धन्य आलोचक नामवर सिंह ने कहा है– "यह कवि शब्दों से खेलता है। शब्दों से रघुवीर सहाय भी खेलते थे। राकेश रंजन के खेलने में एक बाल–सुलभ उमंग है। वह खाली तुकों में ही नहीं, अंदाज में भी दिखाई पड़ती है। इनकी कविता में समाज की धड़कन सुनाई पड़ती है।"[1]उन्होंने विभिन्न रसो में रचनाएँ की हैं, लेकिन उनमें श्रृंगार रस, शान्त रस और वात्सल्य रस की प्रचुरता है। उनकी कविताओं पर देश काल और परिस्थिति का व्यापक प्रभाव दिखाई देता है। उनकी कविताओं में छूटती और बदलती हुई चीजों के प्रति उनकी चिंता, आक्रोश और संवेदना दिखाई देती है। आधुनिक युग में रहकर भी लोक के प्रति लगाव और जुड़ाव उनको और कवियों से अलग पहचान दिलाता है।

मुख्य भागः राकेश रंजन इक्कीसवीं सदी की हिंदी कविता के प्रमुख कवियों में से एक हैं। इन्होने अपनी कविताओं में समाज देश व काल के साथ लोक–तत्त्व को भी स्थान दिया है और साथ हीं ये प्रकृति के स्वच्छंद वातावरण में गाँव की सोंधी मिट्टी के प्रति आत्मिक लगाव रखते हैं। शहरी और ग्रामीण लोक जीवन से इनका गहरा जुड़ाव हैद्य आम जनजीवन का सुखद व दुखद दोनों पक्ष इनकी कविताओं में दिखाई देता है। सामाजिक संरचनाओं में व्याप्त जातीय एवं नस्लीय विसंगतियों पर चोट कर मोहब्बत और अमन का पैगाम दिया हैः

"रहमतों को रौंद कर ये जुल्मतें रह जाएँगी।
गर मुहब्बत छोड़ दोगे नफ़रतें रह जाएँगी।।"[2]

इनकी कविताओं में संस्कारगत रीति–रिवाज, परंपरागत लोक–विश्वास, रूढियां, प्राकृतिक सौंदर्य और मिट्टी की सोंधी–सोंधी खुसबू दिखायी देती है। हिंदी और उर्दू भाषा पर समान अधिकार रखने वाले कवि राकेश रंजन ने लोक को जिया है और आत्मसात भी किया है। इनकी कवितायें लोक की भावनावों, जीवन की अनुभूतियों और समाज की समस्याओं को अभिव्यक्त करती है। इनकी अधिकतर कविताएँ सीधे और सरल भाषा में लोक मर्म को व्यक्त करती है। इस प्रकार इनकी कविताएँ लोगों को अपने समाज के प्रश्नों, समस्याओं, समाधानों और अनुभवों के साथ जोड़ती है तथा उन्हें सोचने, समझने और संवाद करने के लिए प्रेरित करती है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल 'कविता क्या है' निबंध में लिखते हैंः "कविता ही मनुष्य के इदय को स्वार्थ–संबंधों के संकुचित मंडल से ऊपर उठाकर लोक–सामान्य भाव–भूमि पर ले जाती है, जहाँ जगत् की नाना गतियों के मार्मिक स्वरुप का साक्षात्कार और शुद्ध अनुभूतियों का संचार होता है, इस भूमि पर पहुँचे हुए मनुष्य को कुछ काल के लिए अपना पता नहीं रहता। वह अपनी सत्ता को लोक–सत्ता में लीन किये रहता है। उसकी अनुभूति सबकी अनुभूति होती है या हो सकती है।"[3] जैसा कि राकेश रंजन की कविताओं में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है तथा साथ हीं इनकी कविताओं में बहुतायत मात्रा में लोक–मर्म दिखाई देता है। जैसे– खेतिहर मजदुर, किसान, गरीब, दमित–कुंठित लोक समाज की पीड़ा, समाज के विभिन्न वर्गों, समूहों और विभिन्न तबको की वेदना दिखाई देती है, साथ हीं खेतिहर मजदुर और शहरी क्षेत्र में कार्यरत मजदूरों का चिंतन भी है। इनकी कविताओं में गरीबी, बदहाली, सामाजिक विसमताओं के प्रति व्याकुलता भी दिखाई देती है।

"खेती में जब मूर बुड़ाया
बाबा हुए बिगड़कर डंटा
सो मैं शहर कमाने आया
लेकर अपना झोरा–झंटा
यहाँ रात–दिन गात गलाया
पाया बस धोखा बस टंटा
यही समझ लो रामलुभाया
खोया सकल कमाया घंटा।"[4]

इन्होने गरीबों, मजदूरों एवं किसानों की परिस्थिति और वेदना के बीचो–बीच लक्ष्मण रेखा खींचने का एक सफल प्रयास किया है, ताकि उनके दुःख–दर्द स्पष्ट दृष्टिगोचर होः

अनुरूपी लेखक/ संयुक्त लेखक

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.- IV, Issues-38, YEAR- Oct.-Dec.2025

"हर ओर कालिमा का सैलाब बरसता है
भादों के आसमां से बेताब बरसता है
बुझते हुए दियों से खूनाब बरसता है
हर ख्वाब जल गया है तेजाब बरसता है"[5]

'देसिल बयना सब जन मिट्ठा' की धारणा से परिचित ये कवि अपने लोक को जीते हैं और उसे करीब से देखकर अभिव्यक्त भी करते हैं। राकेश रंजन ने लोक भाषा में रचनाएँ की हैं, उनकी भाषा की शिष्टता विशिष्ट है। इनकी कविताएँ सरल, सहज शब्दों के माध्यम से जीवन जगत की सच्चाई से हमारा साक्षात्कार कराती है तो कभी मिथकों के माध्यम से समाज का असली चेहरा भी दिखाने का सफल प्रयास करती है। इनकी कवितओं में समाज के सभी आयामों और मानव जीवन के सभी रसों को स्थान मिला है तथा इनकी कविताओं में लयबद्धता और तारतम्यता भी दिखाई देती है। साथ ही लोक समाज में स्त्रियों की स्थिति को रेखांकित करने का सफल प्रयास है। भारतीय लोक समाज में घरेलू महिलाएं हमेशा से उपेक्षित और तिरस्कृत होती रही है। इनके ऊपर पारिवारिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, सामाजिक परम्पराएं, मूल्य तथा रीति–रिवाज का बोझ हमेशा से रहा है। वे घर की चारदीवारी के बीच घुटन महसुस करती हैं। सुबह से शाम तक घरेलू कार्य एवं परिवार की सेवा में अपना पूरा समय बिता देती है। उन्हें मनोरंजन का पर्याप्त साधन नहीं मिल पाता है। कवि उन महिलाओं के प्रति संवेदनशीलता का परिचय देते हैं, जो द्रष्टव्य है:

"पत्नी बोलीदृभाग्य हमारा जला हुआ है
करिखा ही भाल पर हमारे मला हुआ है

बीते कितने बरस, कहीं भी नहीं घुमाया
सोने जैसा समय धूर में व्यर्थ गँवाया
मेला, ठेला, मॉल, सिनेमा, खेल, तमाशा–
सबकुछ सबके लिए हमारे लिए निराशा
• • • • •
हमें कहा थादृमहादेव दिखते दूल्हे में
और आज! हम यहाँ सती होतीं चूल्हे में!"[6]

अस्तु समकालीन हिंदी कविता के अन्य कवियों की तरह राकेश रंजन की कविताओं में श्रम की महत्ता असंदिग्ध है। इनकी कविताओं में सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक मूल्यों की अभिव्यक्ति दिखाई देती है। विस्मृत हो रही संस्कृति को लेकर कवि के मन में काफी क्षोभ है।

"अजब धीरे–धीरे, ग़जब धीरे–धीरे। बदलता है दुनिया में सब धीरे–धीरे।।"[7]

हर जगह की संस्कृति, वहाँ के परिवेश के अनुसार होती है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति अपनी संस्कृति को आसानी से आत्मसात कर लेता है, लेकिन इक्कीसवीं सदी में वैश्वीकरण ने तेजी से पाँव पसारा है, जिसका परिणाम है कि सारा विश्व एक बाज़ार बन गया है। कोई जगह किस चीज के लिये प्रसिद्ध है पता करना बहुत मुश्किल हो गया है, जिसके कारण हमारी लोक संस्कृति पर खतरे मंडरा रहे हैं।

सिलौट कूटने वाले निपुण लोक–कलाकार हमारी लोक–संस्कृति के परिचायक हैं। इनके द्वारा पत्थर कूटने पर सुनाई देने वाली संगीतमय गूंज हमें अंदर से आह्लादित कर देती थी। पत्थर पर फूल उकेरने की कला, मछलियों को पत्थर पर तैराने की कला में पारंगत सिलौट कूटने वालों का हमारे बीच से चले जाना चिंता का विषय है। मिक्सर मशीन के आने से अब सिलौट की उपयोगिता कम हो गयी है लेकिन इसका महत्व अभी भी कम नहीं हुआ है। आज भी सिलौट शादी–विवाह के अवसर पर पित्तर नेवतने के काम आता है। लोक मान्यता के अनुसार आंधी–पानी को इससे दबा दिया जाता है। दूसरी चीज विवाह में स्त्रियां लोढ़े से दूल्हे के सिर के चारों तरफ घुमाकर परिछावन करती हैं। हमारे बीच से इनका जाना हमारी लोक–संपदा अथवा धरोहर का जाना है। इन सबका हमारे जीवन से लुप्त होना हमारी सांस्कृतिक और पारंपरिक विरासत का दरिद्र होना है, हमारे सामाजिक जीवन से एक व्यापक अनुभव–संसार का चुपचाप चले जाना है। यह अत्यंत चिंता का विषय है। इन चिंताओं के आलोक में 'सिलौट कूटने वाले' कविता की निम्नलिखित पंक्तियां द्रष्टव्य हैं।

"कहाँ चले गए
सिलौट कुटनेवाले?

उनकी छेनियाँ, हथौडियाँ
कहाँ चली गईं
जो दिशाओं में
बजती थीं ठायँ–ठायँ
सिरजती थीं अग्निकण?

हम कैसे भूल गए
पत्थर की छाती कूटकर
संगीत
रचने की वह कला?

अफसोस, मेरे बच्चे
तुम नहीं देख पाओगे
पत्थर पर खिले पुष्पगुच्छ

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.- IV, Issues-38, YEAR- Oct.-Dec.2025

और पत्थर पर
तैरती मछलियाँ!"[8]

भूमंडलीकरण के इस दौर में सूचना–प्रौधोगिकी की और बाजारवाद का सामना करते हुए कवि की संपूर्ण कविता का स्वर लोकोन्मुखी हैं। कृषि में मशीनीकरण होने के पश्चात पारंपरिक खेती के लिए उपयोग में लाये जाने वाले बैल की उपयोगिता वर्तमान समय में प्रासंगिक नहीं है। कवि लोक की दुहाई देते हुए लिखते हैं, आज बैल की उपयोगिता खेती के लिए नहीं है, जो कभी समाज के पोषक हुआ करते थे, न जाने कितने सदियों से लोगों के लिए अन्न उत्पादन कर जीवन दाता बना रहा, परन्तु आज के समय उसकी उपयोगिता समाप्त हो चुकी है। बाजारवाद एवं मशीनीकरण की इस आंधी में वे निरही बुचडखाने तक पहुँच गए हैं। इस कविता में कवि ने लोक संस्कृति की विस्मृति, जानवरों के प्रति असहानुभूती, हिंसा, बाजारवाद का विस्तार एवं मशीनीकरण के प्रति गहरी संवेदना प्रकट किया है। साथ ही लोक के गर्भ से उसकी विकराल समस्याओं का अवलोकन कर उसे उजागर किया है, जो इन्हें एक ससक्त लोक कवि के रूप में पहचान दिलाता है।

"उन्हें ले जाया गया
बूचड़खाने की ओर
फिर भी
वे कुछ नहीं बोले
अगर बोल पाते वे
बैल क्यों कहाते वे?"[9]

प्रकृति और लोक एक दूसरे के करीब होने के कारण इनकी कविताओं में लोक प्रेम और प्रकृति प्रेम की प्रचुरता दिखाई देती है। इन्होंने अपनी कविताओं में जटिलता की जगह सरलता को स्थान दिया है। प्राकृतिक सौंदर्य में जो लोक का दर्शन मिलता है, इन्हें सामान्य कवियों की श्रेणी से ऊपर उठाकर प्रकृति और लोक कवि के रूप में पहचान दिलाती है। इन्होंने प्रकृति के गोद के विभिन्न रूपों, प्राकृतिक सौंदर्य और रहस्य का सुंदर चित्रण किया है, जो अपने कविता के माध्यम से एक नया सौंदर्य स्थापित करती करती है। कवि सुमित्रानंदन पंत कहते हैं कि भारतमाता ग्रामवासिनी है अर्थात भारतमाता की आत्मा गाँव में निवास है। ठीक उसी प्रकार इनकी कविताएं ग्रामीण जीवन से ओतप्रोत है। इनकी कविताओं में सहजता, सरलता, मधुरता एवं लोक व्याप्त है। इनकी इन 'जंगल और खरगोश', 'खिरनी के प्यार में', 'हमीं', 'तुम्हें कहाँ देखा', 'कवि और मेमना', 'अब कहीं मेरी जगह नहीं', 'उचट–उचट जाती है नींद', 'तुम्हारे गाँव की पगडंडियाँ', 'इस वसन्त में' आदि कविताओं में ग्रामीण जीवन, प्रकृति चित्रण, लोकसंस्कृति और लोक–मर्म विस्तृत रूप में दिखाई देता है, जो कवि के प्राकृतिक जुड़ाव को दर्शाता है।

"नीरव इस रात में
न पत्तों की सरसर न पंखों की फड़फड़
न कुत्तों की भूंक न मवेशियों की हँकार
न बारिश न बिजली न पुकार
न युद्ध न प्रहार
फिर भी क्यों जाने
उचट–उचट जाती है नींद
बार–बार..."[10]

कवि ने लोक जीवन के प्रेम को बहुत हीं सरलता से प्रस्तुत किया है, उनके प्रेम में कोई बनावटीपन नहीं है। वह जिस परिवेश में रहते हैं, उसका बहुत ही सरसता के साथ प्रस्तुत करते हैं। इसमें लोक जीवन से जुड़ी हुई बिम्ब का प्रयोग हुआ है, जो हमें लोक धरातल से जोड़ती है। प्रत्येक पाठक संवेदनात्मक, भावात्मक, प्रेरणात्मक और सृजनात्मक रूप से इसमें तल्लीन हो जाता है। इनकी कविताओं में परकीया प्रेम का एक छीटा भी दिखाई नहीं देता है।

"हाँ–हाँ, इसी तरह
तेल–मसाले
और साबुन–सर्फ की गन्ध में डूबी सही
हाथ में बुहारनी है तो क्या
उसे लिए ही आओ
बैठो मेरे पास
पोंछ दूँ पसीना तुम्हारे चेहरे का
साफ कर दूँ धूल–सने होंठ"[11]

इनकी कविताओं में लोकजीवन को प्रभावित करने वाली लोक प्रचलित शब्दों की बहुलता दिखाई देती है, जो इनको लोक कवि की ख्याति दिलाती है। बहुआयामी प्रतिभा के धनी कवि ने अनेक रसों एवं विधाओं में रचना किया है। इनकी कविताओं में प्राकृतिक प्रदत्त वस्तुओं के दोहन की चिंता है। वस्तुतः सतत विकास की अवधारणा प्राकृतिक संसाधनों के बुद्धिमतापूर्ण उपयोग से है, ताकि अगली पीढ़ी को स्वच्छ एवं समृद्ध पर्यावरण तथा प्राकृतिक संसाधनों को सौंपा जा सके। कवि प्रकृति के प्रति गहरा जुड़ाव रखते हैं। इस जुड़ाव का ही परिणाम है, यह कविताः

"हमीं दफना जाएँगे
सारे खेत
और बाग
साडी फसलों, जंगलों को
हमीं लगा जायेंगे आग"[12]

कवि ने "गुरुबानी" के माध्यम से लोक जीवन का निकटतम साक्षात्कार कराया है। इसमें लोक जीवन का सूक्ष्म चित्र प्रस्तुत किया गया है। ग्रामीण जीवन में तम्बाकू के सेवन एवं महत्व को बड़ी ही सजीवता से दिखाने का सफल प्रयास किया गया है। खैनी–चूना

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.- IV, Issues-38, YEAR- Oct.-Dec.2025

हमारी लोक परम्परा का महत्वपूर्ण हिस्सा है। आज भी गाँव में शादी–विवाह के समय अतिथि की अगुवाई में 'डाला' में खैनी–चूना, पान–सुपारी इत्यादि भेजने का पुराना चलन है, जो हमारी लोक संस्कृति का महत्वपूर्ण हिस्सा है। कविता में तंबाकू की तीव्र तलब के आगे भगत मन व्याकुल होकर सिमरन पथ से विचलित हो जाता है। तंबाकू के प्रति लोक में चाह, उत्साह, मेलजोल एवं व्याप्त नशा की प्रवृत्ति का वास्तविक चित्र दृष्टिगोचर करता है।

लोक में व्याप्त व्यसन की प्रवृत्ति के कारण भगत को "खैनी–चूना" अर्चना के लिए उपयोग में लाई जाने वाली सामग्री से भी अधिक महत्व की वस्तु के रूप में दिखाई देता है, जो लोक जीवन का सही उदाहरण प्रस्तुत करता है। 'राम–नाम से जी उचटे है जबसे डिबिया खतम भई' भक्ति के मार्ग से विचलन और कार्य में हुए अवरोध, मन में व्याप्त आकुलता से स्पष्ट है कि तंबाकू लोक की जीवन रेखा के रूप में प्रतीत होता दिखाई देता है। अतः उपर्युक्त कविता लोक जीवन की सामाजिक संरचना में व्याप्त तंबाकू के प्रयोग एवं प्रभाव से प्रेरित व्यंग के रूप में लिखी गयी है।

"खैनी–चूना बिन दुख दूना
सब जग सूना लागे है
मैं तो मैं ना ही हूँ, बचवा!
तू भी तू ना लागे है।
राम–नाम से जी उचटे है
जबसे डिबिया ख़तम भई
आकुल मनवाँ सिमरन–पथ से
किधरो–किधरो भागे है।"[13]

एक लोक कवि के रूप में अपने कौशल का प्रयोग कर आम जनमानस की ह्रदय कि गहराई में उतर कर उसके आंतरिक प्रेम, विरह, पीड़ा, दया, वेदना एवं वास्तविक मनोभाव को यथावत कागज पर उतारने की कला की सिद्धि एक लोक कवि को प्राप्त होती है। सारंगिये कविता में कवि लोक जीवन में निहित 'लोक–मर्म' एवं 'लोक कथा' की बेहतरीन प्रस्तुति करता है। इसमें निहित करुण ह्रदयस्पर्शी गीत, विरह–वेदना और दर्द–पीड़ा को जगा देता है। समाज–परिवार से विरक्ति के पश्चात वैराग धारण करने वाले पुत्रों की माँ तुम्हारी ये कारुणिक गान सुन नहीं पातीं हैं। सन्यास से सती हुई भारतीय स्त्रियों का ह्रदय विकल विछोह भरे गीत से तार–तार हो जाता है। तुम्हारे ये गीत सुनकर वे सभी बिलख–बिलख कर रोती है। 'हरजाई सारंगी बजाते हो तो लगता है, कटार से चीरते हो अपना कलेजा' सारंगिये जो तुमने त्याग दिया घर–संसार, बैराग की आग से स्वाहा कर दिया अपना परिवार–समाज। क्या तुम्हें याद नहीं आती तुम्हारे मां का आंचल जिसमें मिला था, तुमको सहस्त्रों दुलार, अपनी प्रिया का मधुर स्नेह, प्रेम जिसका पूर्णतः अवसान हो चुका है। सारंगिये तुम्हारे इंतज़ार में कितनी माताओं के आंखों से अश्रु सुख चुके हैं।

"हरजाई
सारंगी बजाते हो
तो लगता है
कटार से चीरते हो अपना कलेजा

मत गाओ ऐसा गान
जिससे फूटता है रुदन
मत लो ऐसा आलाप
जो उठता है
विलाप की तरह

जाओ सारंगिये
मेरा सोया हुआ विरह
मत जगाओ सारंगिये!"[14]

प्रस्तुत पंक्तियां ग्रामीण भारत के पारंपरिक लोक–जीवन की झलक प्रस्तुत करती हैं। पौराणिक लोक मान्यता के अनुसार दिपावली के दिन लक्ष्मी का आगमन रात में और दलिद्दर का आगमन भोर में होता है, इसलिए हमारे घर की बुजुर्ग स्त्रियां दिपावली के भोर में कंडा और हँसुआ का प्रयोग कर सूप को बजाते हुए भुनभुनातीं हैं और बोलती हैं, 'ईस्सर पइसे दलिद्दर भागे'। इसके भी अपने नियम होते हैं, दरिदर खेदने के बाद स्त्रियां प्रयोग किए गए सामग्री को गोबर के मान पर रख देती हैं। घर आने के क्रम में वह ना ही पीछे मुड़कर देखती हैं, ना ही बोलती हैं और ना ही सोती हैं। राकेश रंजन ने अपनी कविता में इसी वस्तुस्थिति का चित्रण किया है।

"दिवाली के भोर में
घर के अदृश्य कोनों–अँतरों से लेकर
बाहर के विस्तृत प्रस्तारों तक की
परिक्रमा करती दादी
पीटती थी सूप
दलिद्दर भगाने को
जपती थी अविरत–अविराम–
ईस्सर आवे
दलिद्दर भागे
ईस्सर आवे
दलिद्दर भागे..."[15]

गाँव का जीवन परंपरा, मेहनत और सादगी से भरपूर है। स्त्रियाँ घर–परिवार की रीढ़ हैं, जो संसाधनों की कमी में भी अपने श्रम और कौशल से जीवन चलाती हैं। इसमें जनसंस्कृति, ग्रामीण अर्थव्यवस्था और आत्मनिर्भर जीवनशैली का स्पष्ट चित्रण है। इस कविता में ग्रामीण महिलाओं का कामकाज दिखाया गया है, जो मिट्टी, गोबर और परंपरागत साधनों से घर–परिवार की जरूरतें पूरा करती हैं। कठिन परिस्थितियों में भी उनकी मेहनत और आत्मनिर्भरता समाज की सादगी, संस्कृति और जीवटता का प्रतीक है। प्रस्तुत पंक्तियाँ ग्रामीण जीवन का जीवंत चित्रण करती है, जिसमें लोकजीवन की सादगी, परिश्रम और कठिन परिस्थितियों में भी आत्मनिर्भरता की झलक मिलती है। "श्रम सिक्ता, मृत्तिका–मंडिता"—यहाँ स्त्री की मेहनत से भीगे हुए हाथों और मिट्टी से सने शरीर का चित्रण किया गया है। यह एक गाँव की स्त्री की चित्रण है जो दिन भर घर–आँगन और पशुओं के लिए काम करती है। "गोबर–हस्ता"—उसके हाथ गोबर से सने हुए हैं, क्योंकि वह कंडे के माध्यम से उपले पाथ रही है। यह पीढ़ियों से चली आ रही पारंपरिक ग्रामीण ऊर्जा–स्रोत के उत्पादन की प्रक्रिया है। विपद्–खंडिता–यह पंक्ति दिखाती है कि वह स्त्री मुश्किलों और कमियों के बावजूद अपने काम में लगी रहती है। "दीन–हीन दारुण द्वारों पर/जीर्ण–पुरातन दीवारों पर"–यह गरीबी और समय की मार झेल रहे ग्रामीण घरों की जर्जर, परंपरागत संरचना को दिखाता है, लेकिन उनमें जीवन की गूँज बाकी है। "कंडे मातरम!" यह दृश्य न केवल घरेलू ईंधन बनाने का है, बल्कि "कंडे मातरम" कहना ग्रामीण जीवन में देशसेवा और मातृभूमि की सेवा का प्रतीक है, जो इन पंक्तियों में दिखाई देता है:

"श्रम–सिक्ता, मृत्तिका–मंडिता
गोबर–हस्ता, विपद्–खंडिता
दीन–हीन–दारुण द्वारों पर
जीर्ण–पुरातन दीवारों पर
पाथ रही है
कंडे मातरम!"[16]

निष्कर्ष– निष्कर्षत यह कहना समीचीन है कि इक्कीसवीं सदी की हिंदी कविता के कवि राकेश रंजन ने अपने समय को पूरे परिवेश के साथ प्रस्तुत किया है। इनकी कविताओं में लोक जीवन की जो आभा है, वह कविता पाठ करते समय ज्यामितीय अनुपात में बढ़ जाती है और बढ़ जाता है कविता पर भरोसा। लोक साहित्य जिस समय उपेक्षा, बाजारवाद, वैश्वीकरण और भूमंडलीकरण से उपजे निरादर से जूझ रहा है, उस समय इनकी कवितायें आशा का दीप जलाए रखने की बात कानों में फुसफुसाती है। यह लोक की गर्भ से उपजी कविताएं संवेदनात्मक झनझनाहट पैदा करती है। प्रस्तुत कवितायें उस लोक संस्कृति का आइना है, जिसको इन्होंने लोक जीवन में होने वाली सामान्य जन–जीवन का सूक्ष्मता से अवलोकन और आत्मसात कर जीया है, साथ ही लोक मूल्यों को संरक्षित करते हुए उन्हें सुरक्षित रखने के लिए प्रतिबद्ध है। इसमें कोई संदेह नहीं कि अपने लोकोन्मुखी चेतना और अनुभूतियों के स्तर पर राकेश रंजन लोक के काफी समीप हैं। इनकी कविताओं में लोक को बचाने की जो चिंता है, वह इनकी कविता की प्रत्येक पंक्ति, प्रत्येक शब्द में इस तरह व्याप्त है कि लोक–जीवन, मानवीयता और लोक कल्याण प्रलक्षित होता दिखाई देता है। प्राकृतिक प्रतीकों के माध्यम से इन्होंने लोक जीवन के बिम्ब सिरजे हैं। उनकी कविताओं में निहित चिन्ह, प्रतीक और शब्द मनुष्य जैसा व्यवहार करती है। नदी, झरने, घोंघा, सियार, कुत्ता, सारंगी, पतझड़, बगुला, पत्ते आदि इनकी कविता के सहचर है। इनकी कविताओं में निर्जीव वस्तुओं में भी प्राण स्थापित है। इन वस्तुओं के प्रति कवि की सुक्ष्म दृष्टि है, यह उसका सौन्दर्य बोध भी है और लोकोन्मुखी चेतना भी है। अतः राकेश रंजन की कविताओं में लोक संस्कृति एवं लोक–मर्म विस्तृत रूप में दृष्टिगोचर है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सिंह, नामवर, चाँद में अटकी पतंगदृराकेश रंजन, नयी दिल्ली, प्रकाशन संस्थान, प्रथम संस्करण, 2009, मुद्रित, ब्लर्ब के फ्लैप से उद्धृत।
2. रंजन, राकेश, 'रविवार की तुकबंदी' शीर्षक रचना, फ़ेसबुक पर 18 फरवरी, 2024 को प्रकाशित।
3. शुक्ल, रामचन्द्र, 'कविता क्या है?' शीर्षक निबंध, चिंतामणि, भागदृ1, नयी दिल्ली, प्रकाशन संस्थान, पेपरबैक संस्करण, 2012, मुद्रित, पृ–107.
4. रंजन, राकेश,'दिव्य कैदखाने में', दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, पहली आवृत्ति, 2022, मुद्रित, पृ–71.
5. रंजन, राकेश, 'सरफूनामा' शीर्षक कविता, पक्षधरदृ34, जनवरी–जून, 2023, संदृविनोद तिवारी, नयी दिल्ली, मुद्रित, पृ–182.
6. रंजन, राकेश, 'मानो घर के गिर्द मौत देती हो पहरा' शीर्षक कविता, फ़ेसबुक पर 19 सितंबर, 2022 को प्रकाशित।
7. रंजन, राकेश, 'अप्रैल की तुकबंदी' शीर्षक रचना, फ़ेसबुक पर 6 अप्रैल, 2024 को प्रकाशित।
8. रंजन, राकेश,'दिव्य कैदखाने में', दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, पहली आवृत्ति, 2022, मुद्रित, पृ–49.
9. रंजन, राकेश,'चाँद में अटकी पतंग', नयी दिल्ली, प्रकाशन संस्थान, प्रथम संस्करण, 2009, मुद्रित, पृ–131.
10. रंजन, राकेश,'दिव्य कैदखाने में', दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, पहली आवृत्ति, 2022, मुद्रित, पृ–35.
11. रंजन, राकेश,'दिव्य कैदखाने में', दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, पहली आवृत्ति, 2022, मुद्रित, पृ–86.
12. रंजन,'राकेश, दिव्य कैदखाने में', दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, पहली आवृत्ति, 2022, मुद्रित, पृ–57.
13. रंजन, राकेश,'अभी–अभी जनमा है कवि', नयी दिल्ली, प्रकाशन संस्थान, प्रथम संस्करण, 2007, मुद्रित, पृ–28.
14. रंजन, राकेश, 'सारंगिये' शीर्षक कविता, फ़ेसबुक पर 8 फरवरी, 2024 को प्रकाशित। प्रसिद्ध अभिनेता द्वारा किया गया लाइव पाठ 30. जून, 2024 को यूट्यूब पर 'राकेश रंजनः सारंगिये' शीर्षक से प्रसारित।
15. रंजन, राकेश,'चाँद में अटकी पतंग', नयी दिल्ली, प्रकाशन संस्थान, प्रथम संस्करण, 2009, मुद्रित, पृ–173.
16. रंजन, राकेश, 'पाथ रही है कंडे मातरम्', शीर्षक रचना, फेसबुक पर 29 मार्च, 2025 को प्रकाशित।

*****